उदारवादी लोकतंत्र ही श्रेयस्कर है

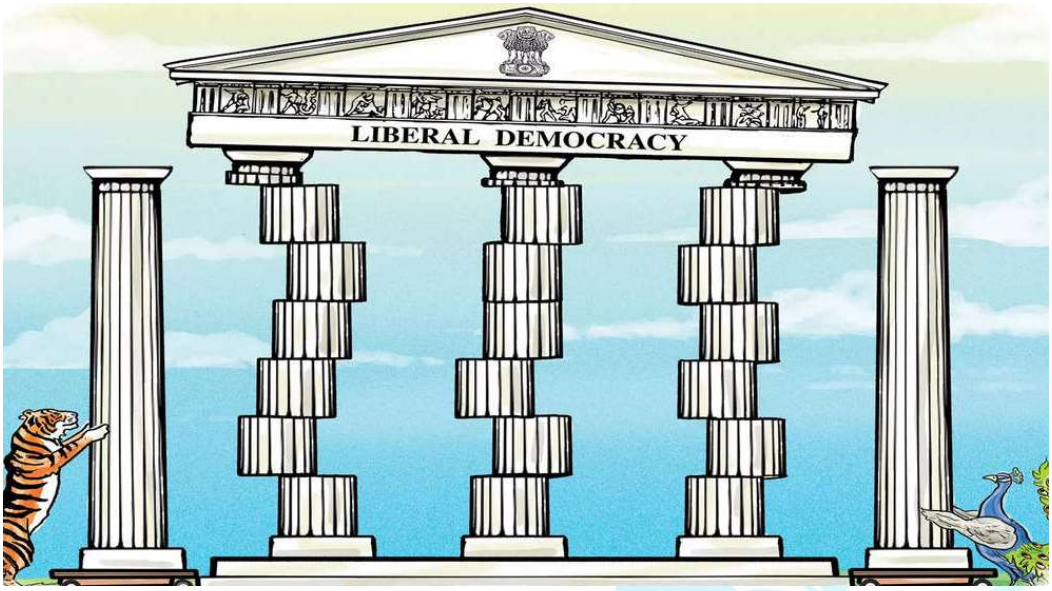

जब भारत स्वतंत्र हुआ, तो हमारे संस्थापकों ने लोकतंत्र को चुना था। आजादी के 75वें वर्ष में कदम रखते हुए यह समझा जाना जरूरी है कि यह चुनाव कितना दुस्साहसी, परंतु उपयुक्त था। विभाजन के भयावह दौर में, यह स्पष्ट नहीं था कि भारत एक देश के रूप में जीवित रह पाएगा या नहीं, इसके विभिन्न प्रांतों और रियासतों को एक किया जा सकेगा या नहीं। इसके बाद क्या इनके बांशिंदे राष्ट्रीय एकता की उस भावना को महसूस कर सकेंगे, जिसने धर्म, जाति, भाषा और सामाजिक-आर्थिक पहचान के मतभेदों को दूर किया है ?

तमाम बाधाओं के बावजूद भारत एक मजबूत लोकतंत्र के रूप में उभरा। इसका एक लाभ यह हुआ कि हमारे फलते-फूलते लोकतंत्र ने हमें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सॉफ्ट पॉवर के रूप में स्थापित किया। विकासशील देशों के लिए एक आदर्शवादी आवाज के रूप में हमारा सम्मान किया जाता रहा। समय बीतने के साथ, हमारे शासन के प्रारंभिक डिजाइन के बारे में चिंता बढ़ती गई। इनमें सबसे पहली थी -

संवैधानिक संरचना - इस संरचना में कार्यपालिका को अत्यधिक श्रेय दिया गया। यह तब आवश्यक भी था, जब देश की संस्थागत क्षमताओं का परीक्षण नहीं किया गया था। फिर भी सरकार को अपने नागरिकों के खिलाफ, शक्तियों को स्थापित करने के लिए पर्याप्त छूट देना समस्याजनक था।

संविधान का विकेंद्रीकरण - यह विकेंद्रीकरण केवल राज्य स्तर तक किया गया। गांव या नगरपालिका के किसी भी महत्वपूर्ण स्तर पर सरकार को पर्याप्त शक्ति, निधि या कर्मचारी नहीं दिए गए।

आर्थिक व्यवस्था का निर्धारण नहीं करना - स्वतंत्रता के समय के शीर्ष नेता सोवियत संघ से प्रभावित थे। उन्होंने सार्वजनिक क्षेत्र को अर्थव्यवस्था का आधार बनाया, और निजी क्षेत्र की भूमिका को सीमित रखा।

आपातकाल से बढ़ी चिंता - इस दौरान सत्तावाद के काले पक्ष का अनुभव किया गया, जिसने न केवल विपक्ष को, बल्कि आम आदमी को भी चोट पहुंचाई।

शिक्षा के प्रसार की कमी - 1950 में, भारतीयों की शिक्षा का औसत वर्ष एक था। वहीं चीन में यह 1.8 था। स्वतंत्रता के 20 वर्षों बाद भारत 1.7 के औसत पर पहुंचा, जबकि चीन 4.2 पर आ चुका था।

यह लोकतंत्र की विशेषता है कि वह अपने में सुधार कर सकता है। आपातकाल के बाद, भारत ने भी अपनी लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करने का प्रयत्न किया, लेकिन पर्याप्त रूप से नहीं। पंचायती राज को सक्षम बनाने के लिए संविधान में संशोधन किया गया। उदारीकरण ने कुशल श्रमिकों की मांग में वृद्धि की। 1990 में शिक्षा को औसत दोगुना होकर 3.6, और 2015 में 7.4 हो गया।

अब एक बार फिर से हमारे लोकतंत्र और अर्थव्यवस्था को सुधार की जरूरत है। लोकतांत्रिक संस्थाएं पतन की ओर हैं। राष्ट्रीय राजनीतिक चेतना को एक केंद्रीकृत हिंदू पहचान से जोड़ने का भ्रामक प्रयास, धार्मिक अल्पसंख्यकों को अलग-थलग कर रहा है। इससे देश कमजोर और विभाजित हो रहा है। पड़ोसी देशों से संबंध खराब हुए हैं। उत्तरी दिशा का पड़ोसी आक्रामक हो रहा है।

ऐसा दुष्कर राजनीतिक परिदृश्य, अर्थव्यवस्था को गर्त में ढकेले दे रहा है। पहले से अधिक प्रतिस्पर्धी हो गई दुनिया में हमारे लोगों की क्षमताएं नीचे गिर रही हैं। अतीत की लोकलुभावन और संरक्षणवादी नीतियों की ओर लौटकर, हम जनसांख्यिकीय लाभांश को नष्ट करने का खतरा मोल ले रहे हैं। करोड़ों युवाओं को निराश-बेरोजगारों की श्रेणी में शामिल होते हुए देख रहे हैं।

अभी देर नहीं हुई है। हमारा उदार लोकतंत्र एक बार फिर, प्रेरक विकल्पों के साथ, इन चुनौतियों का सामना करने की शक्ति दे सकता है। इसका उद्देश्य एक खुले समाज को संरक्षित करके, आर्थिक कल्याण की दिशा में आगे बढ़ना है। आजादी की 75वीं वर्षगांठ के लिए सबसे उपयुक्त श्रद्धांजलि यही होगी।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित रघुराम राजन और रोहित लांबा के लेख पर आधारित। 22 जनवरी, 2022